भूगोल तथा इतिहास के साथ मानव तथा मानवीयता का अध्ययन

परिभाषा -

भूगोल = पृथ्वी, उसकी संरचना, विस्तार, वातावरण और स्थिति ।

इतिहास = विविधता, उसका अर्थ, क्रमिक सम्बन्ध एवं विकास घटनाओं का आंकलन ।

आधार -

1. धरती एवं उसकी स्थिति शीलता
2. धरती की स्थितिशीलता में विविधता - चार अवस्था की सृष्टि है

अनिवार्यता : भौगोलिक परिधि में ही विकास घटना क्रम में मनुष्य का होना मानव के लिये मानवीयता स्वत्व एवं विकास क्रम ही इतिहास होना ।

प्रयोजन -

1. अस्तित्व में अनुभूति
2. प्रामाणिकता का वैभव एवं परम्परा.

इस पृथ्वी पर चारों प्रकार की सृष्टि एवं उसके क्रिया कलाप अविच्छिन्न रूप से सम्बन्धित हैं, इसी से भूगोल एवं इतिहास का अविनाभाव सम्बन्ध सिद्ध होता है ।

पदार्थ, प्राण, जीव एवं ज्ञानावस्था की बात पूर्व में संक्षेप में कही जा चुकी है । ज्ञानावस्था में मानव घटना है । मनुष्य ही इस घटना क्रम का अध्ययन एवं संस्कृति सभ्यता पूर्वक इतिहास को स्थापित करता है । मनुष्य ने उसके विकासक्रम व्यक्तिक्रम को बनाये रखने के अधिकार को प्रकाशित किया है । मानव के ज्ञानावस्था से पूर्व की सृष्टि में जीवावस्था को वंशानुषंगी क्रम आचरण एवं भोजशील होने, प्राणावस्था की वनस्पति मात्र को बीजानुषंगी पुष्टि शील होने और पदार्थ मात्र को गठन-पूर्वक क्रियाशील होने के वैभव को देखा है । मनुष्य को जीवों के तदृश्य ही व्याख्यायित करने के क्रम में जाति, नस्ल और रंग की बात कही गई, इसी के साथ-साथ कुछ चिंतकों ने इसके अर्थात् जीवों से भिन्न करने के प्रयास किये । इन्हीं वैचारिक आधारों पर मानव में अपना इतिहास स्थापित करने की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई ।

.. 2 ..

"मानव संस्कार पूर्वक अभ्युदयशील है"। इसी की साक्षी में प्रधानतः नाम, जाति, धर्म एवं कर्म के अर्थ में ही शिक्षा संस्कार पाते हुए मनुष्य को देखा जाता है । मनुष्य स्वयं संवेदन एवं संज्ञानशीलता का संयुक्त रूप होने के कारण सामाजिकता के लिये बाध्य है । पदार्थावस्था की भौतिक एवं रासायनिक विविधता एवं विशालता ही प्राणावस्था का आधार है । पदार्थावस्था की समृद्धि के बिना प्राणावस्था का प्रसव या अवतरण संभव नहीं है । पदार्थ विकसित होकर प्राणावस्था में प्रकाशित होता हुआ देखा जा रहा है । पदार्थावस्था की समृद्धि का तात्पर्य पदार्थावस्था की मूल इकाई परमाणुओं की स्थिरता से है । ऐसी स्थिति में विकास की संभावना स्वयमेव आसन्न होती है । प्राणावस्था में क्रियाशीलता सहित स्पंदनशीलता और उसकी परम्परा स्थापित होती है । स्पंदनशील सम्पन्न अणु स्पंदन क्रिया से सम्पन्न होते हैं ये ही प्राण कोशिकाओं का पद पाते हैं । उक्त कोशिकाओं की सम्मिलित संरचना तथा उसके फलस्वरूप बीज और वृक्ष का आवर्तन होना देखा जाता है । इस प्रकार पदार्थ ही रासायनिक एवं भौतिक संयोगवश विकसित होकर अन्य वनस्पति के रूप में प्रकाशित होते हैं जो जीवावस्था की पूर्व संरचना है यही ह्रास पूर्वक अर्थात् अन्न वनस्पति या मृद पाषाण आदि के रूप में परिवर्तन होती है । यही उसके ह्रास की अवधि है ।

इस प्रकार पदार्थावस्था विकसित होकर प्राणावस्था में, प्राणावस्था ह्रास होकर पदार्थावस्था में परिवर्तित होने के इस क्रिया चक्र को प्राणपद चक्र के नाम से जाना जाता है । यही भौतिक एवं रासायनिक परिवर्तन की विविधता को स्पष्ट करता है ।

पदार्थों में पद-भेद से अर्थ भेद (भौतिकता) प्रकाशित होना पाया जाता है । इसका प्रमाण प्राण-पद चक्र में ही स्पष्ट है । सम्पूर्ण प्रकृति गठन, समूह और संगठन पूर्वक ही अपने स्वभाव गति में प्रकाशित व स्थापित करने योग्य क्षमता, योग्यता एवं पात्रता को प्रकाशित करती है साथ ही अग्रिम विकास की संभावना का सिद्ध होना देखा जाता है । समात्मक परिवर्तन रासायनिक एवं भौतिक सीमा सम्बन्धी है । इसी के साथ इनके गुणों में भी परिवर्तन होता है । अस्तु प्राणपद कोशिकायें समूह में गठित होने के फलस्वरूप विभिन्न (आकार, प्रकार) देखने में आता है । ऐसी ही संयुक्त संरचना पौधे या झाड़ों के रूप में दृष्टव्य है। इसी क्रम में या ये ही प्राणकोशिकायें जीव एवं मनुष्य के शरीर का निर्माण करती है ।
इसलिए मनुष्य को शरीर सीमा में पहचानने की स्थिति में जीव एवं वनस्पति शरीर संरचना-कार्य पद्धति से बहुत ज्यादा अंतर नहीं पाया जाता, जबकि स्थिति में मौलिक अंतर देखा जाता है । इन सबको ध्यान में लाने के बाद ही इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि झाड़ों की अपेक्षा जीव एवं मनुष्य शरीर संरचना में मेधस की रचना विशेष रूप में होना पाया जाता है । इस

. . 3 . .

सीमा में मनुष्य को चिन्हित करने का प्रयास किया गया । मनुष्य इस सीमा में चिन्हित नहीं हो पाया, फलतः मनुष्य का मूल मूर्त रूप चैतन्य स्थिति क्रिया कलाप, आकांक्षाओं एवं उद्देश्य प्रवृत्ति, प्रवृत्ति एवं निवृत्ति, दिशा, कोण, आयाम परिप्रेक्ष्य सम्बन्धी ज्ञान से स्पष्ट होने के लिये हम तत्पर हैं । इसी तत्परता के क्रम में मानव का स्वभाव गुण मानवीयता से सम्पन्न होना एक अनिवार्य स्थिति है ।

चैतन्य इकाई मेधस से युक्त शरीर को संचालित करती है । अधिक शक्ति, कम व्यक्ति के माध्यम से या अधिक गति कम गति के माध्यम से प्रकाशित होती है । चैतन्य इकाई में मात्रात्मक परिवर्तन न होते हुए भी गुणात्मक परिवर्तन होता है । इसका साक्ष्य मनुष्य में होने वाले संस्कार परिवर्तन, संवेदनशीलता, संज्ञानीयता में परिवर्तन व्यक्ति एवं प्रतिभा में परिवर्तन है । मनुष्य गुणों का प्रदर्शन मानवीय गुणों की अपेक्षा में करता है । इसी आशा, प्रत्याशा के फलस्वरूप ही परस्पर गुणों का आदान-प्रदान होता है । इन्हीं परस्पर अपेक्षाओं के अभाववश भाव की अपेक्षा में अनुसंधान एवं अध्ययन करते हुए मानव घटनाक्रम, संस्कृति, सभ्यता, विधि एवं व्यवस्था के रूप में इतिहास को स्पष्ट किया है इतिहास की विगत की घटना एवं गौरव को ज्ञापित करने का एकमात्र स्रोत है । इतिहास प्रधानतः गुणों के अर्थ में है । अप्रधान रूप में रूप और तादातों की गणना है । इस स्थिति को हम मानव में प्रकाशित होने वाले गुण व स्वभाव के आधार पर पाँच स्तर में संकलित कर सकते हैं -

1. पशु मनुष्य
2. राक्षस मनुष्य
3. मनुष्य
4. देव मनुष्य एवं
5. दिव्य मनुष्य ।

पदार्थ, प्राण, जीव एवं ज्ञानावस्थाओं की क्रम स्थिति में प्राणपद चक्र, भ्रांति पद चक्र, देव-पद चक्र एवं मुक्ति अर्थात् चक्रों से मुख्यतः स्पष्ट है । पदार्थावस्था से प्राणावस्था, प्राणावस्था से पदार्थावस्था में होने वाला ऋण धनात्मक परिवर्तन प्राणपद चक्र के रूप में प्रकाशित है । जीवावस्था भ्रान्त मनुष्य की अवस्थाअर्थात् अमानवीय अवस्था का परिणाम भ्रांति, पद चक्र को इंगित करता है । अमानवीय मनुष्य, मनुष्याकार में होते हुए हिंसक एवं अहिंसक जीवों के सदृश्य कार्य कलाप करता है । जीवावस्था की चैतन्य इकाई-विकसित होकर मनुष्य के रूप में और भ्रान्त मनुष्य जीवों के सदृश्य होना स्पष्ट है । यही भ्रांत पद चक्र की अवधि है । इसी अवधि में अमानवीय पशु एवं राक्षस। मनुष्य प्रकाशित है जो असामाजिक के रूप में गण्य है ।

ए नागराज, प्रणेता एवं लेखक मध्यस्थ दर्शन (सहअस्तित्ववाद) www.madhyasth.org

प्रत्येक मनुष्य सामाजिकता या समाज में आस्वस्त एवं विश्वस्त होता है। इसी तथ्यता का मनुष्य में सामाजिक सचेतना एवं उसकी समृद्धि एक अनिवार्य स्थिति ही देव पद चक्र में मानवीयता पूर्ण मनुष्य का विकसित होकर देव-मानव पद में अवस्थित होना और देव मानव का ह्रास पूर्वक मानव पद में अवस्थित होना पाया जाता है। सामाजिकता व व्यवहारिकता, संस्कृति एवं सभ्यता का संयुक्त प्रकाशन है। मानवीय सभ्यता व संस्कृति ही मानव का स्वत्व होने, मानवीय गुण ही मानव का स्वभाव गुण एवं प्रक्रिया होने एवं समाधान समृद्धि अभय तथा सह अस्तित्व का सहज प्रसव का आधार होने के कारण मानव मानवीय सभ्यता संस्कृति से समृद्ध होना देव पद चक्र का विभव है।

उक्त तीनों चक्रों में अनन्त पद स्पष्ट होता है फलतः अनन्त अर्थ सिद्ध होता है। चक्र पद मुक्ति ही दिव्य पद है, जो दिव्यात्मा या दिव्य मानव के अर्थ में स्पष्ट है। सम्पूर्ण प्रकृति रूपात्मक अस्तित्व होने के कारण रासायनिक एवं भौतिक सीमा के हर पद में अस्तित्व के साथ परिणाम शील होता है। चैतन्य इकाई में गठन-पूर्णता के साक्षी परमाणु में मात्रात्मक परिवर्तन का समापन होना स्वाभाविक है। इस पूर्णता के अनन्तर भी गुणों के आधार पर अनेक वैचित्र्यता जीवों के रूप में प्रकाशित हुई है। ज्ञानावस्था के मनुष्य में केवल 5 कोटि ही स्पष्ट है।

इससे भी स्पष्ट इतिहास झलकता है कि कम से कम वैचित्र्यता मानव में, जीवों में मनुष्य से अधिक कोटियाँ, प्राणावस्था में जीवावस्था से अधिक कोटिया तथा पदार्थावस्था में प्राणावस्था से अधिक कोटियाँ है। इस साक्ष्य में रूपात्मक एवं गुणात्मक विकास स्थिरता की ओर है न कि अस्थिरता की ओर। इसी तथ्यता की स्पष्ट स्थिति समाधान एवं उसकी निरंतरता है।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सत्ता में सम्पृक्त प्रकृति अस्तित्व एवं अस्तित्व स्वयं सह अस्तित्व है। सह-अस्तित्व शील प्रकृति की पदार्थावस्था में पाई जाने वाली सांगठनिक कार्य-प्रणाली के इतिहास में भूगोल स्पष्ट है। भूगोल के इतिहास में भूगोल स्पष्ट है। भूगोल के इतिहास में चार प्रकार की सृष्टि रूप और गुणों का परिवर्तन और पदों में परिवर्तन होना स्पष्ट हुआ है। यही मानव की धार्मिक आर्थिक, राज्यनीति की संस्कृति, सभ्यता, विधि एवं व्यवस्थाएँ, इतिहासिक विधायें है। इन्हीं विधाओं की क्रमिकता का ज्ञापन इतिहास के रूप में ख्याल होता है यही मानव, मानव, जीवन, जीवनीक्रम एवं जीवन का कार्यक्रम स्वयं मानवीयता के अर्थ में ज्ञापित होता है।

"इतिहास भी संस्कार परम्परा का आधार है" ।

"प्रकृति का इतिहास"

स्थिति पूर्ण सत्ता में संपृक्त क्रियाशील प्रकृति में से -

पदार्थावस्था	+ क्रम	=	प्राणावस्था
प्राणावस्था	- क्रम	=	पदार्थावस्था
प्राणावस्था	+ क्रम	=	जीवावस्था = संक्रमण = चैतन्य पद= जीवों के शरीर द्वारा चैतन्य इकाई का प्रकाशन ।
जीवावस्था	+ क्रम	=	भ्रान्त ज्ञानावस्था = पशु मनुष्य व राक्षस मनुष्य
भ्रान्त ज्ञानावस्था	- क्रम	=	जीवावस्था
भ्रान्त ज्ञानावस्था	+ क्रम	=	भ्रान्ताभ्रान्त ज्ञानावस्था=संक्रमण
		=	मानवीयता पूर्ण मानव = ततकीता
भ्रान्ताभ्रान्त ज्ञानावस्था	+ क्रम	=	निर्भ्रांत देव मानवावस्था,
निर्भ्रांत देव मानवावस्था	- क्रम	=	भ्रान्ताभ्रान्त ज्ञानावस्था
निर्भ्रान्त देव मानव अवस्था	+ क्रम	=	निर्भ्रान्त दिव्य मानवावस्था =
			संक्रमण = निर्भ्रान्त दिव्य मानवावस्था
		=	पूर्ण जागृति = जागृति की निरंतरता=
			= शिक्षा संस्कार का नित्य स्रोत=
			शिक्षा व उपदेश की आत्मा एवं
			उसकी अनुभूति= तृप्ति, समाधान,
			अभय एवं सह अस्तित्व=सर्वमंगल ।